इकाई 6 रस सिद्धांत : अवधारणा और आयाम

इकाई की रूपरेखा

6.0 उद्देश्य

6.1 प्रस्तावना

6.2 रस का अर्थ

6.3 रसचिन्तन की परम्परा

- 6.3.1 रसचिन्तन के प्रमुख आचार्य
- 6.3.2 भरतमुनि से पूर्व रस विवेचन
- 6.3.3 भरतमुनि का रसचिन्तन

6.4 भरतमुनि के रस सिद्धान्त की व्याख्याएँ

- 6.4.1 लोल्लट : उत्पत्तिवाद
- 6.4.2 शंकुक : अनुमितिवाद
- 6.4.3 भट्टनायक : भुक्तिवाद
- 6.4.3 अभिनवगुप्त : अभिव्यक्तिवाद

6.5 हिंदी साहित्य में रसचिन्तन

6.6 सारांश

6.7 अवधारणात्मक शब्द

6.8 उपयोगी पुस्तकें

6.9 बोध प्रश्न

6.10 बोध प्रश्नों के उत्तर

6.0 उद्देश्य

इस इकाई को पढ़ने के बाद आप :

- रस के अर्थ को समझ सकेंगे,
- रस के संदर्भ में विवेचन की परम्परा से परिचित हो सकेंगे,
- भरतमुनि के रस सिद्धान्त के व्याख्याकारों के मतों से परिचित हो सकेंगे, और
- हिंदी साहित्यों में रस संबंधी विवेचन के बारे में जान सकेंगे।

6.1 प्रस्तावना

भारतीय काव्यशास्त्र साहित्य विवेचन का मुख्य आधार रहा है। साहित्य मूल्यांकन तथा साहित्य विवेचन के लिए जिन साहित्यिक मानदण्डों अथवा प्रतिमानों का प्रायः

BHDC-106.indd 75 19-03-2021 08:51:35

उपयोग किया जाता रहा है वे काव्यशास्त्र पर ही आधरित रहे हैं। साहित्यिक मानदण्ड का स्वरूप भले ही समय-समय पर बदलता रहा है किन्तु उन्हें ऊर्जा और संपोषण भारतीय काव्यशास्त्र से ही प्राप्त होता रहा है। भारतीय काव्यशास्त्र में विभिन्न सम्प्रदायों का विवेचन मिलता है। इन सम्प्रदायों में निर्धारित मानदण्ड साहित्यिक अध्ययन विवेचन एवं मूल्यांकन के लिए उपयोगी होते रहे हैं किंतु रस सिद्धान्त का महत्व इस दृष्टि से अधिक बढ़ जाता है कि वह साहित्य की आत्मा माना जाता है और उसके ग्रहण एवं आस्वादन की प्रक्रिया मानव मन को अभिभूत कर लेती है– बरबस आकृष्ट कर लेती है। रस सिद्धान्त के मानदण्डों के अनुरूप साहित्य– विशेषतः कविता का अध्ययन- अध्यापन एवं मूल्यांकन होता रहा है। रस का संबध भाव एवं संवेदना से प्रत्यक्ष रूप से जुड़ा हुआ है इसलिए यह कहना अतिशयोक्तिपूर्ण नहीं होगा कि रस को काव्यास्वादन, काव्यमीमांसा तथा मूल्यांकन का आधार माना जाना चाहिए। कविता में यद्यपि पारंपरिक रचना-प्रक्रिया का अभाव दिखाई देता है। इसके बावजूद यह कहा जा सकता है कि शैलीगत, भाषागत एवं अभिव्यक्ति कौशल के आधार पर दिखाई देने वाले अन्तर के रहते हुए भी वही कविता अधिक प्रभावशाली एवं दीर्घकाल तक स्थाई कही जा सकती है जिसमें संवेदना को ग्रहण करने तथा पाठकों को संवेदना के धरातल पर आन्दोलित करने की क्षमता हो। इस दृष्टि से अध्ययन करने पर हमें प्रतीत होता है कि रस सिद्धान्त भारतीय काव्यशास्त्र का एक केन्द्रीय तत्व है। रस के सन्दर्भ में विस्तृत चर्चा हुई हैं। रस का खण्डन भी हुआ है और उसकी प्रकृति को लेकर विवाद भी। प्रस्तुत इकाई में रस सिद्धान्त के विभिन्न आयामों की चर्चा की जाएगी जिससे आप रस सम्प्रदाय, रस के स्वरूप एवं उसकी व्याख्याओं से तो परिचित हो ही, आप लोग यह भी समझ सकें कि रस की व्याख्या हिंदी आलोचकों ने किस प्रकार की तथा समकालीन हिंदी कविता तक के मूल्यांकन में रस का प्रयोग किस तरह से किया गया?

6.2 रस का अर्थ

सामान्यतः रस का अर्थ आस्वाद है। वह आस्वाद जो किसी वस्तु या पदार्थ के उपयोग के पश्चात किसी व्यक्ति को प्राप्त होता है। इसका दूसरा पक्ष द्रव पदार्थ से जुड़ता है जैसे सन्तरे का रस, नींबू का रस, गन्ने का रस अथवा अनुभूति के कारण व्यक्ति को प्राप्त होने वाले आनन्द की अनुभूति अथवा आनन्द की स्थिति रस है। सरस वार्ता से भी आनन्द की अनुभूति होती है। इस दृष्टि से विचार करें तो काव्यपाठ, नाट्यदर्शन, ललित कलाओं के अवलोकन से होने वाली आनन्द की अनुभूति भी रस कहलाती है। दर्शनशास्त्र में ज्ञान की दो श्रेणियाँ बताई गई हैं इन्द्रियजन्यज्ञान तथा शास्त्रीय ज्ञान। पंचेन्द्रियों से प्राप्त ज्ञान की भाँति पंचेन्द्रियों से प्राप्त अनुभव भी होता है। इस प्रकार इन्द्रियजन्य अनुभव से भी रस मिलता है। इसीलिए रस सुखात्मक भी होता है और दुःखात्मक भी इसीलिए भारतीय काव्यशास्त्र आचार्य रामचन्द्र – गुणचन्द्र रस को दुःखात्मक और सुःखात्मक दोनों प्रकार का मानते हैं। इस तरह कह सकते हैं कि किसी वस्तु की द्रवात्मक अवस्था, स्वाद तथा पढ़ने, लिखने, देखने तथा सुनने के फलस्वरूप प्राप्त होने वाली भाव बोधात्मक स्थिति को रस माना जा सकता है।

रस की उत्पत्ति परक व्याख्या करें तो हम पाते हैं कि 'रस' शब्द की उत्पत्ति 'रस' धातु में अंड 'प्रत्यय' जोड़ने से होती है जिसका उत्पत्ति परक अर्थ है – आस्वादे इति रसः अर्थात् जिसको आस्वादित किया जाय या जिसका रस लिया जाय वह रस है।

6.3 रसचिन्तन की परम्परा

6.3.1 रसचिन्तन के प्रमुख आचार्य

यद्यपि रसचिन्तन का संबन्ध सीधे भरतमुनि से जुड़ता है। भरत मुनि द्वारा प्रस्तावित रस सूत्र की व्याख्या के इर्द-गिर्द ही सारी चर्चाऐं होती हैं जिसके आधार पर रस निष्पत्ति, रस की प्रकृति तथा साधारणीकरण जैसे विषयों पर विस्तृत चर्चाओं और विश्लेषणों का मूल्यांकन होता है, किन्तु रस सिद्धान्त के संदर्भ में काव्य की आत्मा और काव्य के मूलतत्व तथा काव्य की व्याख्या से संबंधित विषयों पर चर्चा के दौरान अनेक आचार्यों ने रस की चर्चा की है। रस के महत्व तथा काव्य के संदर्भ में उसके प्रयोजन को स्वीकार करने वाले काव्य शास्त्रियों और सिद्धान्तकारों में भरतमुनि के अतिरिक्त भट्ट लौल्लट, आचार्य शंकुक, भट्टनायक, अभिनवगुप्त, मम्मट, विश्वनाथ और पंडितराज जगन्नाथ ने भी न केवल रस की चर्चा की अपितु रस को काव्य तत्व के रूप में वर्णित कर उसका समर्थन किया। भट्ट लौल्लट, आचार्य शंकुक, भट्टनायक तथा अभिनवगुप्त तो भरतमुनि के रससूत्र के प्रमुख व्याख्याकार हैं ही। रस को नया उत्कर्ष प्रदान करनवाले आचार्य हैं, विश्वनाथ जिन्होंने रसात्मक वाक्य को काव्य कहा। पंडित राज जगन्नाथ का महत्व इस बात में है कि उन्होने रमणीयार्थ प्रति पादक अभिव्यंजना को काव्य माना जो रसात्मकता से जुड़ा हुआ है। आचार्य रामचन्द्र तथा गुणचन्द्र रस विवेचन के प्रसंग में विशेष रूप से उल्लेखनीय है इसका कारण यह है कि उन्होंने रस का आनन्द को अवस्था से ही नहीं जोड़ा अपितु उसे सुखात्मक और दुःखात्मक दोनों माना। इस प्रकार रस के समर्थक आचार्यों की संख्या तो अधिक है ही रस के समर्थन में तर्क की प्रकृति एवं उसके औचित्य को लेकर उनका विवेचन भी विशेष रूप से रेखांकित करने योग्य है। रस समर्थक आचार्यों ने मैत्रेय गुप्ताचार्य हर्ष, कीर्तिधारा तथा राहुल, श्रृंगदेव आदि का भी नाम लिया जा सकता है जिन्होंने रस के विषय में अपने विचार व्यक्त किए हैं।

6.3.2 भरतमुनि से पूर्व रस विवेचन

रस सम्प्रदाय के प्रवर्तक भरतमुनि माने जाते हैं। उनकी रचना 'नाट्यशास्त्र' में लिखित रससूत्र (तत्र विभावानुभाव व्याभिचारि संयोगात रस निष्पत्ति; अर्थात् वहाँ (रंगमंच पर) विभाव; अनुभाव तथा व्यभिचारी भाव (संचारी भाव) के संयोग से रस की निष्पत्ति होती है, को ही रस विवेचन का मूलाधार माना जाता है किन्तु 'रस' शब्द का प्रयोग भारतीय धर्मग्रन्थों में इसके पहले भी मिलता है। प्राचीन 'तैतरीय उपनिषद' में इसका प्रयोग सबसे पहले हुआ इस बात के साक्ष्य उपलब्ध हैं। वहाँ रस का प्रयोग परब्रह्म के अर्थ में हुआ है। उसमें कहा गया है – यतैव ततः सुकृत आनंदित करने वाला तत्व रस है। कहने की आवश्यकता नहीं कि उपनिवेश के बाद रची गई धार्मिक एवं सांस्कृतिक महत्व की रचनाओं में भी 'रस' का प्रयोग हुआ है। रस का प्रयोग सीमित अर्थ में कभी नहीं हुआ इसीलिए इसके व्याख्याकारों ने रस की व्याख्या में अर्थ विस्तार किया, पर इस बात से इनकार नहीं किया जा सकता कि रस को काव्यचिन्तन के संदर्भ में सुव्यवस्थित ढंग से प्रस्तुत कर उसे मान्य बनाने का श्रेय भरतमुनि को ही दिया जा सकता है।

6.3.3 भरतमुनि का रसचिन्तन

रस सिद्धान्त के प्रवर्तक भरतमुनि को किस समय का माना जाय, इस पर मतैक्य नहीं है किन्तु संस्कृत आचार्यो और काव्यशास्त्र के मर्मज्ञों ने ईसापूर्व दूसरी शताब्दी

BHDC-106.indd 77 19-03-2021 08:51:35

से लेकर ईसा की दूसरी शताब्दी तक के बीच का समय भरतमुनि का समय माना है। जो भी हो लगभग दो हजार वर्षों से रस विवेचन काव्याचिंतन का केन्द्रीय तत्व बना हुआ है। भरतमुनि की रचना 'नाट्यशास्त्र' को कभी पंचमवेद माना गया तो कभी ब्रह्मा की वाणी। इन बातों को उल्लेख स्वयं 'नाट्यशास्त्र' में मिलता है। नाट्यशास्त्र में मूलतः रस सिद्धान्त का प्रतिपादन हुआ है किन्तु यह कृति नाटक सामाजिक जीवन और साहित्य की सामाजिकता जैसे विविध विषयों पर विचार का आधार बनी हुई है।

छत्तीस अध्यायों में वर्णित 'नाट्यशास्त्र' में विस्तार से बताया गया है कि विभिन्न जातियों/प्रजातियों की सामाजिक स्थिति क्या है। रस कैसे और कहाँ निर्मित होता है और प्रजापिता ब्रह्मा ने किस प्रकार 'नाट्यशास्त्र' की रचना की प्रेरणा दी। भरतमुनि ने रस के स्वरूप की चर्चा छठें तथा तैंतीसवें अध्यायों में की है। रससूत्र निर्मित करने वाले श्लोक का हिंदी में अर्थ इस प्रकार है – सर्वप्रथम रसों की ही व्याख्या करेंगे क्योंकि इन रसों के बिना किसी अर्थ की प्रवृत्ति नहीं होगी। विभाव, अनुभाव तथा व्याभिचारी भावों के संयोग से रस की नित्पत्ति होती है।

कहना न होगा कि इसी रससूत्र की व्याख्या दो हजार वर्षों से विद्वान और आलोचक करते आ रहे हैं। इसलिए यह विशेष रूप से उल्लेखनीय है कि भरतमुनि रस शब्द का प्रयोग नाट्यबोध के संदर्भ में ही करते हैं। रस, भाव, अभिनय, धर्म, कृति, प्रकृति, सिद्धिश्वर, गान तथा रंग को भरतमुमि 'संग्रह' कहते हैं।

वे रस को अंगीभूत करते हुए मानवों से ही जोड़ते हैं। रस की व्याख्या करते हुए भरतमुति कहते हैं कि अनेक भावों तथा अभिनय से सम्बद्ध स्थाई भावों का प्रबुद्ध जन मनसा (मानसिक रूप से) आस्वादन करते हैं। अतः इसको नाट्य रस कहा जाता है। इसकी व्याख्या करते हुए वे कुछ उदाहरण देते हैं। वे कहते हैं कि जिस प्रकार गुड़ आदि द्रव्यों, व्यंजनों और औषधियों से स्वादिष्ट पानक रस उत्पन्न होता है उसी प्रकार अनेकानेक भावों के उपगत होने से स्थाई भाव रसत्व को प्राप्त करते हैं।

भरत मुनि द्वारा की गई रस की व्याख्या से अधिक विवेचन संस्कृत काव्यशास्त्र तथा हिंदी आलोचना में इस बात का हुआ है कि भरतमुनि के रस सूत्र में जो विचार है उसके अनुसार 'रस निष्पत्ति' क्या है? भरत मुनि के रससूत्र में ही रस नित्पत्ति शब्द व्यक्त हुआ है। संस्कृत के आचार्यों ने भी अपने अपने ढंग से भरतमुनि के रससूत्र की व्याख्या की और रस नित्पत्ति का आशय समझाने का प्रयास किया।

6.4 भरतमुनि के रस सिद्धान्त की व्याख्याएँ

भरतमुनि द्वारा प्रतिपादित रस सिद्धान्त का मूल तत्व रस नित्पत्ति को परिभाषित करने वाला रससूत्र है, जिसमें कहा गया है कि नाटक में मंच पर विभाव, अनुभाव तथा व्यभिचारी भाव (संचारी भाव) के संयोग से रस की नित्पत्ति होती है। इस सूत्र की व्याख्या संस्कृत आचार्यों ने विभिन्न दृष्टियों से की जिसके आधार पर व्याख्याकारों के अपने-अपने सिद्धान्त बने। इन व्याख्याकारों के सिद्धान्तों में व्याख्याकारों ने अपने पूर्ववर्ती आचार्यों के मतों को पूर्व पक्ष के रूप में प्रस्तुत करते हुए अपने मत को उत्तर पक्ष के रूप में प्रस्तुत कर उसका औचित्य सिद्ध करने तथा पूर्वपक्ष का खण्डन करने का प्रयास किया। इस प्रक्रिया में हुई विभिन्न व्याख्याओं तथा उनके द्वारा निरूपित सिद्धांतों की चर्चा करना उपयुक्त होगा।

BHDC-106.indd 78 19-03-2021 08:51:35

6.4.1 लोल्लट : उत्पत्तिवाद

भट्ट लोल्लट को भरतमुनि के रस सूत्र का प्राचीनतम व्याख्याकार कहा जा सकता है। संस्कृत काव्यशास्त्र के मर्मज्ञ तथा संस्कृत साहित्य के इतिहासकार सुशील कुमार ने इस बात का उल्लेख करते हुए लिखा कि भट्ट लोल्लट की पुस्तक तो उपलब्ध नहीं है किन्तु उनके विषय में जो चर्चा मिलती है वह अभिनव गुप्त द्वारा की गई टीका में है जिसे बाद के विद्वानों ने कमोवेश मान लिया है। भट्ट लोल्लट ने भरतमुनि के रससूत्र की व्याख्या करते हुए जिस सिद्धान्त का प्रतिपादन किया उसे उत्पत्तिवाद कहा जाता है। यह मूलतः नाटक के सन्दर्भ में भरत के रस की व्याख्या है। यहाँ उल्लेखनीय है कि आचार्य भामह तथा आचार्य दण्डी ने भी रस की व्याख्या की है किन्तु वह नाटक के संदर्भ में नहीं है। वह मूलतः काव्यानुभूति पर केन्द्रित है।

भट्ट लोल्लट के अनुसार, रस नित्पत्ति का आशय उत्पन्न होना, पूरा होना अथवा उपचित होना है। भट्ट लोल्लट ने माना कि रस की उत्पत्ति होती है। कहने का आशय है कि भरतमुनि जिसे 'नित्पत्ति' मानते हैं वह लोल्लट के अनुसार, उत्पत्ति मूलतः ऐतिहासिक पात्र रामादि (राम आदि) में होती है। ऐतिहासिक पात्र राम में, रस की उत्पत्ति मानते हुए भट्ट लोल्लट कहते हैं कि राम में रस की उत्पत्ति इसलिए होती है क्योंकि राम सीता से प्रेम करते हैं। अब यह बात भी महत्वपूर्ण है कि ऐतिहासिक पात्र राम में रस की नित्पत्ति होती तो है किन्तु नट अर्थात् अभिनेता तथा नटी अर्थात् अभिनेत्री अपनी क्षमता, योग्यता और प्रतिभा के अनुसार उस रस का अभिग्रहण करते हैं क्योंकि वे ही ऐतिहासिक पात्रों की भूमिकाएँ निभाते हैं। इस प्रकार में वे ऐतिहासिक पात्रों का अनुकरण करते हैं। इस प्रकार रस मूलतः ऐतिहासिक पात्रों में निहित होता है। उन पात्रों में ही रस उत्पत्ति होती है और नट-नटी में रसाभास होता है। इस रसाभास के कारण दर्शक या सामाजिक में क्षणिक भ्रांति के कारण रस की प्रतीति होती है और वह रसानुभूति अर्थात् आनन्द की अनुभूति करता है।

भट्ट लोल्लट द्वारा प्रतिपादित उत्पत्तिवाद नामक सिद्धान्त का विश्लेषण करते हुए आचार्य शंकुक ने न्याय दर्शन के संदर्भ में उसे समझाते हुए लोल्लट के सिद्धान्त की सीमाओं को बताते हैं। भट्ट लोल्लट मीमांसक (मीमांसा दर्शन को मानने वाले) थे इसलिए उनकी दृष्टि मूलतः अभिधापरक थी। इसी का परिणाम यह है, भट्ट लोल्लट की व्याख्या उत्पत्तिवाद पर आधारित है। वास्तव में शंकुक और लौल्लट की व्याख्याओं में अन्तर न्याय और मीमांसा की दृष्टि में अन्तर पर आधारित है। उत्पत्तिवाद से असहमत होते हुए कहा गया कि विभाव आदि को ही स्थाई भाव मानकार रस की नित्पत्ति को स्वीकार करना उचित नहीं होगा। रसकी स्थिति पराकाष्ठा तक पहुंचने पर ही नहीं होती। हास्य रस की स्थिति के द्वारा इसे समझा जा सकता है।

भट्ट लोल्लट द्वारा की गई रससूत्र की व्याख्या की सीमाओं को स्पष्ट करते हुए संस्कृत के विद्वान पंडित बलदेव उपाध्याय लिखते हैं 'इसे मानने में सबसे बड़ी त्रुटि यह है कि यह दर्शक या सामाजिक में रस की सत्ता नहीं मानता तब दर्शकों का नाटक में इतना आकर्षण क्यों? क्या क्षणिक भ्रांति से इतना आनन्द उत्पन्न हो सकता है।'

भट्ट लोल्लट द्वारा प्रतिपादित उत्पत्तिवाद वास्तव में ऐतिहासिक पात्रों– रामआदि में रस की उत्पत्ति मानता है जो नट-नटी में प्रतीत होता और उस रसाभास को दर्शक अपनी कल्पना से आत्मसात कर रसानुभूति करता है। वास्तव में यह अवधारणा सहज स्वीकार्य नहीं है। इसीलिए परवर्ती आचार्यों ने इससे सहमति नहीं व्यक्त की; विशेष रूप से शंकुक ने।

BHDC-106.indd 79 19-03-2021 08:51:35

6.4.2 शंकुक अनुमितिवाद

आचार्य शंकुक भट्ट लोल्लट के कनिष्ठ समकालीन थे। वे कश्मीर के रहने वाले थे। कल्हड़ ने 'राजतरंगिणी' में शंकुक के काव्य का उल्लेख करते हुए उन्हे अपने समकालीन कश्मीर के शासक आतिजापीड़के के काल का विद्वान बताया। शंकुक के रससूत्र की व्याख्या तथा उसका विस्तृत विवेचन अभिनवगुप्त ने अभिनवभारती के अध्याय 3 से 29 तक में किया है। इसमें अभिनवगुप्त ने शंकुक के मतों की आलोचना भी की है किन्तु इससे इतना तो स्पष्ट हो ही जाता है कि शंकुक ने 'नाट्यशास्त्र' की विवेचना की।

अभिनवगुप्त ने शुंकक के मत को प्रस्तुत करते हुए कहा कि रस के कारण रूप में विभावों तथा कार्य रूप अनुभावों और सहचारी रूप व्यभिचारीभावों (संचारी भावों) से उत्पन्न होने के कारण कृत्रिम होने पर भी उसी प्रकार के प्रतीत होने वाले काम सहकारी रूप पूर्वक्ति (पहले कहे गए) विभावों आदि से लिंग (स्त्री, पुरुष) की सामर्थ्य से अनुकर्त्ता (नट) में स्थित रूप से प्रतीत होने वाला मुख्य अनुकार्य राम आदि में स्थित रति आदि स्थाई भाव 'का' अनुकरण होता है। अनुकरण रूप न होने कारण ही स्थाई भाव से न कहा जाकर उससे भिन्न नाम से व्यवहृत रस कहा जाता है। विभाव काव्य के द्वारा उपस्थिति होते हैं। अनुभाव शिक्षा से तथा व्यभिचारी भाव अपने कृत्रिम भावों के अर्जन द्वारा उपस्थित होते हैं। स्थाई भाव इनमें से किसी भी साधन से उपस्थित नहीं होता।

आचार्य मम्मट शंकुक के मतों को स्पष्ट करते हुए कहते हैं कि राम ही है अथवा यही राम हैं – इस प्रकार की सम्यक प्रतीति – यह राम नहीं – इस ज्ञान के बाद में बोध हो जाने पर यह राम है, इस प्रकार की मिथ्या प्रतीति, यह राम है या नहीं– ऐसी संशयात्मक प्रतीति तथा यह सम जैसे हैं – इसी प्रकार की सादृश्य प्रतीति (इन चार प्रकार के ज्ञानों से) विलक्षण प्रतीति द्वारा चित्र तुरंग न्याय नट में 'यह राम है' ऐसी प्रतीति हो जाती है।

इस विवेचन से कुछ बातें स्पष्ट हो जाती है। पहली बात तो यह कि शंकुक की रससूत्र की व्याख्या अनुमिति पर आधारित है। जैसा कि हम जानते हैं कि शंकुक न्याय दर्शन के समर्थक थे इसलिए उन्होंने अनुमिति अर्थात् अनुमान को प्रमाण के रूप में स्वीकार किया। उन्होंने चित्र तुरंग न्याय अर्थात् चित्र में घोड़े को देखकर वास्तविक घोड़े के रूप में समझ लेना माना। मम्मट ने शंकुक की व्याख्या को इसी रूप में स्पष्ट किया। इसका अभिप्राय यह हुआ कि नट अथवा नटी ऐतिहासिक पात्रों को अपने चरित्र अर्थात् पात्र की भूमिका में निभाने की कोशिश करते हैं जिसके कारण उनमें रसानुभूति होती है और नट-नटी को ऐतिहासिक पात्रों की भूमिका निभाता देखकर दर्शक या सामाजिक उनको वास्तविक चरित्र के रूप में आभासित करता है जिसके फलस्वरूप उसमें रसानुभूति उत्पन्न होती है किन्तु वास्तव में रसानुभूति अभिनेता-अभिनेत्री अर्थात् नट-नटी में उत्पन्न होती है। इसके बावजूद इससे सामाजिक (दर्शक) भी रस की अनुभूति प्राप्त करता है। सामाजिक का अनुमान न्याय दर्शन की तरह केवल अनुमान नहीं होता अपितु विलक्षण अनुमान होता है। अनुमान की यह विलक्षण प्रवृत्ति ही सामाजिक या दर्शक में भी रस के आनन्द को प्राप्त करने का कारण बनती है।

संस्कृत साहित्य के विद्वान सुशील कुमार डे शंकुक के मत का विवेचन करते हुए कहते हैं कि शंकुक मानते हैं कि रस एक प्रभाव के रूप में उत्पन्न नहीं होता अपितु

BHDC-106.indd 80 19-03-2021 08:51:35

वह दर्शक द्वारा अनुमित होता है और यह अनुमित भावना उसके द्वारा रस के रूप में अनुभूत होती है। नायक का स्थाई भाव अभिनेता में निहित होता है जो कि वास्तव में उसमें अवस्थित नहीं होता है– विभाव आदि के माध्यम से ऐतिहासिक पात्र से उसमें अभिनय के द्वारा अभिव्यक्त होता है जिससे कि वह नायक की अनुभूतियों के साथ जुड़ाव का का भ्रम उत्पन्न कर सके।

इस प्रकार कह सकते हैं कि शंकुक रसानुभूति को ऐतिहासिक पात्र राम आदि में तो मानते हैं किन्तु वे नरादि में उसकी अनुमिति चित्र तुरंग न्याय के आधार पर मानकर अभिनेता में रसादि की प्रतीति पर बल देते हैं। भट्ट लोल्लट की अवधारणा तथा शंकुक के रस की अवधारणा में मूल अन्तर यह है कि भट्ट लोल्लट रसकी उत्पत्ति मानते हैं जबकि शंकुक रसकी अनुमिति मानते हैं। इसीलिए लोल्लट का सिद्धान्त उत्पत्तिवाद के नाम से जाना जाता है जबकि शंकुक का सिद्धान्त अनुमितिवाद के नाम से जाना जाता है। दूसरा बड़ा अन्तर यह है कि भट्ट लोल्लट रसानुभूति मूलतः ऐतिहासिक पात्र में मानते हैं जबकि आचार्य शंकुक रसानुभूति मूलतः नटादि (नट आदि) में मानते हैं। तीसरा प्रमुख अन्तर यह है कि भट्ट लोल्लट सामाजिक या दर्शक में रसानुभूति को कोई जगह नहीं देते जबकि शंकुक की मान्यता के अनुसार सामाजिक या दर्शक में रसानुभूति की थोड़ी संभावना रहती है। यद्यपि सहृदय की अवधारणा तथा इसके साधारणीकरण का कोई भी संदर्भ भट्ट लोल्लट एवं आचार्य शंकुक दोनों की व्याख्याओं में नहीं मिलता। ये दोनों ही अवधारणाएँ भट्टनायक के सिद्धान्तों में मिलती हैं।

6.4.3 भट्टनायक : भुक्तिवाद

भट्टनायक का रचनाकाल 'ध्वन्यालोक' तथा 'अभिनव भारती' की रचना का मध्यवर्तीकाल है अर्थात् 'अभिनव भारती' के रचनाकार अभिनवगुप्त तथा ध्वन्यालोक के रचनाकार आनन्दवर्धन ने रस सिद्धान्त पर अपना मत व्यक्त किया किन्तु आनन्दवर्धन ध्वनि सम्प्रदाय के प्रवर्तक हैं इसलिए उन्होने अपना ध्यान मुख्यतः ध्वनि सिद्धान्त की स्थापना पर केन्द्रित किया। भट्टनायक से पहले आनन्दवर्धन के मत को समझना उचित होगा।

आनन्दवर्धन कहते हैं कि रस अर्थवाच्य के साथ ही प्रतीत होता है और वह अंगी रूप में प्रतीत होता हुआ ध्वनि स्वरूप है। इस बात को स्पष्ट करते हुए आनन्दवर्धन बताते हैं कि नाना प्रकार के वाच्य, वाचक और उनके चारूत्व हेतुओं 'का' जहाँ रस आदि में तात्पर्य हो वह ध्वनि का विषय माना जाता है। इससे यह तो स्पष्ट है कि भट्ट नायक से पहले आनन्दवर्धन ने भी रसके सन्दर्भ में विवेचन किया।

अब हम भट्टनायक के विचारों और उनकी रस सम्बन्धी स्थापनाओं की चर्चा करेंगे। भट्टनायक रस सूत्र के व्याख्याकार के रूप में तो प्रसिद्ध हैं ही, कुछ विद्वान इन्हे 'समग्र' नाट्यशास्त्र भाष्यकार भी माना है। अभिनवगुप्त की अभिनव भारती में भट्टनायक का विस्तृत विवेचन न मिलने से यह स्पष्ट होता है कि भट्टनायक समग्र नाट्यशास्त्र के व्याख्याकार नहीं थे।

भट्टनायक के मत को अभिनवगुप्त इस रूप में प्रस्तुत करते हैं – रस न तो प्रतीत होता है, न उत्पन्न होता है और न ही अभिव्यक्त होता है। स्वगत रूप से अर्थात् सामाजिक स्वयं में रसकी प्रतीति मान लें तो करुण रस में सामाजिक को दुःख की प्रतीति होनी चाहिए किन्तु यह प्रतीति उचित नहीं है। सीता आदि के विभाव के रूप में उपस्थित न होने के कारण अपनी पत्नी आदिका नाट्य प्रसंग में स्मरण न होने

BHDC-106.indd 81 19-03-2021 08:51:35

के कारण स्वदेवता आदि के विभाव होने पर उनके साधारणीकरण के अनुपयुक्त होने के कारण और हनुमान आदि के समान विभावों के द्वारा किए गए समुद्र लंघन आदि का साधारणीकरण असंभव होने से समाजिक को जगत रूप से अर्थात् स्वतः रस की प्रतीति नहीं होती।

इस प्रकार अभिनवगुप्त भट्टनायक के मत का विस्तृत विवेचन करते हुए कहते हैं कि ख्यादि (रति आदि) ये युक्त राग आदि विभावों की न तो स्मृति होती है और न ही शब्द और अनुमान प्रमाणों से रस की प्रतीति मानने पर प्रत्यक्षज्ञान जैसी सरसता। इस प्रकार कहा जा सकता है कि भट्टनायक भट्ट लोल्लट के उत्पत्ति तथा आचार्य शंकुक के अनुमितिवाद का खंडन करते हैं वे इसे दोनों ही स्थितियों में दोषपूर्ण मानते हैं। तब आखिर रस की नित्पत्ति कहाँ होती है? किस में रसानुभूति होती है? उसके प्रक्रिया क्या है? इन बातों को भट्टनायक इस रूप में प्रस्तुत करते हैं— वाक्य में दोषाभाव एवं गुणालंकार ममत्व लक्षण के कारण और नाटक में चार प्रकार के अभिनय सामाजिक के अपने अन्तःस्थित सभी मोहों तथा संकटों का निवारण करने वाले एवं निभावादि के साधारणीकृत रूप अभिधा शक्ति के पश्चात भावकत्व व्यापार के द्वारा भाव्यमान (साधारणीकरण) होकर अनुभव तथा स्मृति आदि से भिन्न विलक्षण प्रकार के रजोगुण तथा तमोगुण के मिश्रण के वैविध्य के कारण वृद्धि; विकास तथा विस्तार स्वरूप स्वगुण के प्राधान्य द्वारा प्रकाशमान आनन्दमय साक्षात्कार विश्राम स्वरूप परंब्रह्म के आस्वाद से समाज द्वारा रस को भोजकत्व व्यापार के द्वारा भोग किया जाता है।

इस प्रकार भट्टनायक रस की उत्पत्ति, अनुमिति दोनों को ही अस्वीकार करते हुए तीन काव्य व्यापारों की अवधारणा प्रस्तुत करते हैं— अभिधा, भावकत्व तथा भोजकत्व। इसकी परिणति भुक्ति है। इसीलिए भट्टनायक का मत भुक्तिवाद के नाम से जाना जाता है। अभिधा की चर्चा तो मीमांसा को (मीमांसा दर्शन को मानने वाले) ने पहले से ही की थी किन्तु भावकत्व तथा भोजकत्व काव्य व्यापार की अवधारणा भट्टनायक की ही देन है। भट्टनायक के योगदान की व्याख्या करते हुए सुशील कुमार डे कहते हैं कि भट्टनायक ने न केवल रस सिद्धान्त की नई व्याख्या की अपितु उन्होंने रस की व्यक्तिनिष्ठ अवधारणा से उसे वस्तुनिठ अवधारण के रूप में रूपान्तरित किया और उन्होंने बताया कि इसकी पूरी अवधारणा को दर्शक के दृष्टिकोण से व्याख्याचित किया जाना चाहिए और उन्होंने इसको सौन्दर्यनिन्द; (भोग के अर्थ में व्याख्याथित किया जो कि बाद में सांख्य दर्शन के मत के अनुरूप व्याख्याचित हुआ।

भट्टनायक ने रस को साधारणीकरण से जोड़ा है। इसमें व्यक्ति संबंधों तथा देशकाल की सीमाओं से ऊपर उठकर मुक्त होकर सामान्य धरातल पर सामान्य स्थिति में आ जाता है। रामादि की रत्यादि स्थाई चित्तवृत्ति का जब साधारणीकरण होता है तभी वह भावन का विषय बनती है तथा सामाजिक को रस का साक्षात्कार होता है। वह उसका भोग करता है। यह भोग ही भोजक व्यापार है। रसभोग अलौकिक अनुभव होता है और वह ब्रह्मस्वाद सदृश होता है।

रस की व्याख्या में भट्टनायक का विशेष महत्व इस बात को लेकर है कि उन्होंने रस को विशेष रूप में प्रतिष्ठित कर दिया। रस का प्रत्यक्ष भोक्ता मानते हुए सामाजिक या दर्शक की स्थिति को भट्टनायक ने महत्व प्रदान किया तथा साधारणीकरण नामक नई अवधारण का प्रवर्तन किया। रस भुक्ति है और विभादि भोजक है। इसमें भोज्य भोजक संबंध होता है। भावकत्व वास्तव में साधारणीकरण है। नित्पत्ति को यहाँ भुक्ति समझा जाना चाहिए।

कहना न होगा कि भुक्तिवाद भी पूर्णतः निर्विवाद नहीं रहा। इसका भी खंडन किया गया। अभिनवगुप्त ने भट्टनायक के सिद्धान्त भुक्तिवाद का खंडन करके ही अभिव्यक्तिवाद की स्थापना की। अभिनवगुप्त ने भोजकत्व को व्यापार के रूप में स्वीकार करना अनुचित बताया। इसी प्रकार उन्होंने अभिव्यक्ति पर बल देते हुए अभिव्यक्ति को रस नित्पत्ति के रूप में व्याख्यायित किया जिसकी चर्चा आगे होगी।

6.4.4 अभिनवगुप्त : अभिव्यक्तिवाद

अभिनवगुप्त काव्यशास्त्र एवं नाट्यशास्त्र के ज्ञाता तथा व्याख्याता थे। कश्मीर निवासी अभिनवगुप्त की प्रमुख रचनाएँ हैं– अभिनव भारती, ध्वन्यालोक लोचन, तंत्रलोक, तंत्रसार, बोधपंचदार्शिका आदि। इनका मुख्य अध्ययन क्षेत्र, साहित्यशास्त्र, दर्शनशास्त्र, तंत्रशास्त्र तथा प्रकीर्ण रहा है।

अभिनवगुप्त ने रससूत्र की व्याख्या में एक नया आयाम जोड़ा है। उनके अनुसार, नित्पत्ति का अर्थ है अभिव्यक्ति। संयोग शब्द में विभावादि को शामिल कर लिया गया है। यह रसकी अभिव्यक्ति के कारण है। रसकी व्याख्या में अभिनवगुप्त अलौकिक स्वरूप की अवधारणा प्रस्तुत करते हैं और उसे लोकोत्तर मानते हैं लौकिक मर्यादाओं और नियमों से परे मानते हैं। वे भट्टनायक के भावकत्व एवं भोजकत्व जैसे व्यापारों को नहीं मानते तथा केवल साधारणीकरण के व्यापार को स्वीकार करते हैं। अभिनवगुप्त 'ध्वन्यालोक लोचन' तथा 'अभिनव भारती' दोनों ही कृतियों में रससूत्र की व्याख्या करते हैं। इस व्याख्या में रससूत्र के सन्दर्भ में वे अभिव्यक्तिवाद की नई अवधारणा का प्रतिपादन करते हैं। 'अभिनव भारती' में वे विस्तार से अपने मत का प्रतिपादन करते हुए कालिदास की रचना 'अभिज्ञान शाकुंतलम' के चरित्र दुष्यन्त एवं शकुन्तला के माध्यम से रसनित्पत्ति को इस तरह स्पष्ट करते हैं– सहृदय को कालिदास विरचित अभिज्ञान शाकुंतलम की नायिका शकुन्तला एवं नायक दुष्यन्त के सन्दर्भ में लिखित वाक्यार्थ (लोकार्थ एवं वाक्यार्थ) की प्रतीति के बाद उस वाक्य में गृहीत काल आदि के विभाव की अपेक्षा (साधारणीकरण) कराने वाली मानसी एवं साक्षात्कारात्मिका प्रतीति उत्पन्न होती है और उस प्रतीति में जो मृग शावक आदि विषय रूप में अभिव्यक्त होता है उसके साधारणीकरण हो जाने से मृगपोत विषयक भ्रम उत्पन्न होता है, जिससे भयानक रस होता है। इसी प्रकार अन्य रसों की नित्पत्ति होती है।

अभिनवगुप्त रस के सन्दर्भ में प्रतीति की बात करते हैं। वे रस को रसना के आस्वाद अथवा चर्वण से जोड़ते हैं। इस प्रकार अभिनवगुप्त जहाँ एक ओर रस को इन्द्रिजन्य अर्थात् लौकिकता से जोड़ते हैं वहीं दूसरी ओर वे उसकी अलौकिकता का भी समर्थन करते हैं। वे मानते हैं कि रस केवल स्थाई भाव का फलितार्थ नहीं अपितु भाव, विभाव, एवं अनुभाव– तीनों के संयोग से ही उत्पन्न होता है।

अभिनवगुप्त के सिद्धान्त अभिव्यक्तिवाद की व्याख्या करते हुए आचार्य मम्मट कहते हैं कि रसलोक में उद्यान आदि के द्वारा रसादि स्थाई भाव का अनुमान करने में निपुण सामाजिकों के हृदय में स्थित वासना की अभिव्यक्ति होती है। इस प्रक्रिया में साधारणीकरण होता है।

भरतमुनि के रससूत्र की व्याख्या में भट्टनायक तथा अभिनवगुप्त की व्याख्याओं ने नया आयाम जोड़ा। भट्टनायक ने जहाँ साधारणीकरण की अवधारणा प्रस्तुत की वहीं अभिनवगुप्त नित्पत्ति को अभिव्यक्ति मानकर रस सिद्धान्त को व्यापक रूप में प्रस्तुत करते हैं।

BHDC-106.indd 83 19-03-2021 08:51:35

6.5 हिंदी साहित्य में रसचिन्तन

रस सिद्धान्त को संस्कृत आलोचना मे व्यापक स्वीकृति मिलने के कारण हिंदी आलोचना भी उसके प्रभाव से दूर नहीं हुई। रस सिद्धान्त की महत्ता तथा रस सिद्धान्त के औचित्य पर विचार करने के साथ-साथ हिंदी आलोचना में रस सूत्र की नई भावनाएँ भी हुई और संस्कृत में की गई व्याख्याओं के समर्थन और विरोध में भी तर्क प्रस्तुत किए गए। हिंदी आलोचना में जिन विद्वानों ने रस सिद्धान्त के संदर्भ में गंभीरता से विवेचन किया है तथा अपनी मान्यताएँ दृढ़ता से प्रस्तुत की और उनकी मान्यताओं को हिंदी आलोचना में भी स्वीकृति मिली उनमें आचार्य रामचन्द्र शुक्ल, आचार्य नन्द दुलारे वाजपेयी, डॉ. नगेन्द्र के मत विशेष रूप से उल्लेखनीय है। डॉ. राममूर्ति त्रिपाठी के मत को इन आचार्यों के मतों का विस्तार माना जा सकता है। यहाँ आचार्य रामचन्द्र शुक्ल, नन्द दुलारे वाजपेयी तथा डॉ. नगेन्द्र के मतों को संक्षेप में प्रस्तुत किया जा रहा है।

आचार्य रामचन्द्र शुक्ल की साधारणीकरण की व्याख्या संस्कृत आचार्यों से भिन्न है। वे रस नित्पत्ति पर अधिक बल न देकर के आलम्बनत्व के साधारणीकरण की चर्चा करते हैं। 'रसमीमांसा' भारतीय काव्यशास्त्र, विशेषतः रस सिद्धान्त की पुनर्व्याख्या करने वाली एक महत्वपूर्ण कृति है जिसके द्वारा रामचन्द्र शुक्ल ने विस्तार से अपने मत प्रस्तुत करते हुए रस की अलौकिकता, उसके आलंबनत्व धर्म आदि के माध्यम से वे साहित्य को लोकोत्तर सत्ता और अलौकिक आनन्द के विपरीत अलौकिकता तथा जीवन सापेक्षता से जोड़ते हैं। आचार्य शुक्ल मानते हैं कि 'साधारीकरण आलम्बनत्व धर्म का होता है, व्यक्ति तो विशेष ही रहता है पर उसमें प्रतिष्ठा ऐसे सामान्य धर्म की रहती है जिसके साक्षात्कार से श्रोताओं या पाठकों के मन में एक ही भाव का उदय थोड़ा या बहुत होता है।' यही नहीं वे साधारणीकरण विवेचना को एक नैतिक पक्ष से जोड़ देते हैं। इसके अन्तर्गत वे उन स्थितियों की कल्पना करते हैं जब रचनाकार द्वारा वर्णित चित्रित 'चरित्र के साथ पाठक दर्शक का पूर्ण तादात्म्य (जुड़ाव) न हो तो पाठक या दर्शक रचनाकार के वांछित रस तत्व को ग्रहण नहीं कर सकेगा। इसीलिए वे मानते हैं कि साधारणीकरण प्रभाव का होता है व्यक्ति या सत्ता का नहीं।

आचार्य शुक्ल ने करुणा एवं प्रेम नामक दो बीजभावों को रेखांकित किया। इसका अभिप्राय यह है कि वे स्थाई भावों की तुलना में इन दो बीजभावों को विशेष महत्व देते हैं। वे शास्त्र विवेचित रस की उच्च दशा के अतिरिक्त एक अन्य दशा – मध्यम दशा की भी परिकल्पना करते हैं। उनके अनुसार "श्रोता या दर्शक उसी भाव का अनुभव नहीं करता जिसकी व्यंजना पात्र अपने आलंबन के प्रति करता है बल्कि व्यंजना करने वाले उस पात्र के प्रति किसी और ही भाव का अनुभव करता है। ऐसी दशा में आश्रय के साथ तादात्म्य या सहानुभूति होगी, बल्कि श्रोता या पाठक उक्त पात्र के शीलदृष्टा या प्रकृति दृष्टा के रूप में प्रभाव ग्रहण करेगा और यह प्रभाव भी रसात्मक ही होगा। पर इस रसात्मक प्रभाव को हम मध्यम कोटि का ही मानेंगे।"

आचार्य नन्द दुलारे वाजपेयी प्रायः प्राचीन आचार्यों की रस संबंधी मान्याताओं का समर्थन करते हैं और शुक्ल जी के मतों का प्रत्याख्यान करते हैं। 'नई समीक्षा' शीर्षक लेख में वाजपेयी लिखते हैं, "भारतीय रस सिद्धान्त को उन्होंने (शुक्ल जी ने) मुख्य समीक्षा सिद्धान्त माना किन्तु रस के आनन्द पक्ष पर उसके संवेदनात्मक पक्षपर उनकी निगाहें नहीं गई। साहित्य समीक्षा को सैद्धान्तिक आधार देने वाले तथा सुव्यवस्थित चिन्तन करने वाले पहले समीक्षक शुक्ल जी ही थे किन्तु रस सम्बंधी उनकी व्याख्या

BHDC-106.indd 84 19-03-2021 08:51:35

भाव व्यंजना या अनुभूति पर आश्रित न होकर एक नैतिक और लोकवादी आधार का अवलम्ब लेती है।" वाजपेयी जी का मत अभिनवगुप्त के अभिव्यक्तिवाद से जुड़ता है। वे कहते हैं "रस शब्द आस्वादवर्धक है किसी वस्तु का आस्वाद मिलने पर ही हम उसके रस या ध्वनि की चर्चा करते हैं। इसी के साथ रस शब्द अनुकूल आस्वाद का भी द्योतक है"।

डॉ. नगेन्द्र रस सिद्धान्त की प्राचीन व्याख्या से तो सहमत हैं ही वे उसको मनोवैज्ञानिक सन्दर्भ से भी जोड़ते हैं। यही नहीं 'रस सिद्धान्त' नामक अपनी कृति में डॉ. नगेन्द्र नई कविता की व्याख्या भी रस सिद्धान्त के द्वारा करते हैं। यह कहा सकता है कि डॉ. नगेन्द्र हिंदी आलोचना में रस सिद्धान्त की महत्ता को प्रतिष्ठित करने वाले अन्तिम महत्वपूर्ण आलोचक हैं जिन्होंने व्यावहारिक अलोचना में भी रस सिद्धान्त की गरिमा प्रतिष्ठित करने का प्रयास किया। डॉ. नगेन्द्र मानते हैं कि साधारणीकरण वास्तव में कवि कल्पित समस्त व्यापार का होता है। केवल किसी पात्र विशेष का नहीं। इसी प्रश्न को न समझने के कारण ही अनेक निरर्थक विवाद होते रहे हैं। इस प्रकार कहा जा सकता है कि डॉ. नगेन्द्र रस की लौकिकता तथा नैतिक आयाम संबंधी आचार्य शुक्ल की मान्यताओं से सहमत नहीं हैं यद्यपि वे मानते हैं कि भट्टनायक, अभिनवगुप्त तथा शुक्ल जी की मान्यताओं के बीच सहमित बिठाई जा सकती है और वे कहते हैं कि कवि की भावना के साधारणीकरण मान लेने से ऐसा संभव है।

डॉ. राजमूर्ति त्रिपाठी यद्यपि काव्यशास्त्र में आचार्य शुक्ल के प्रदेय को स्वीकार करते हुए एक लेख भी लिखते हैं किन्तु रस सम्बन्धी शुक्ल जी की व्याख्या पर प्रश्न उठाते हुए कहते हैं "शुक्ल जी का रस दर्शन आंशिक रूप से मनोविज्ञान पर उनके लोक दर्शन पर आधारित है। मनोविज्ञान पर आधारित होने के कारण जहाँ वे एक अधूरे और व्यक्तिगत मनोविकारों पर या मनोवेगों के रूप में स्थाई भाव के विश्लेषण से रस-विमर्श कर आरंभ करते हैं वहीं दूसरी ओर अपने लोकदर्शन के भाव स्वरूप उसकी चरम परिणति व्यक्तिसत्ता का साधन फलतः सत्कर्म प्रवृत्ति मानते हैं।"

इस प्रकार हम देखते हैं कि हिंदी आलोचना में रस संबंधी महत्वपूर्ण चर्चाएँ रामचन्द्र शुक्ल की मान्यताओं के इर्द-गर्द ही घूमती रही हैं किन्तु इसका सार्थक परिणाम यह रहा है कि लम्बे समय तक रस सिद्धान्त पर चर्चा हो रही है।

6.6 सारांश

रस सम्प्रदाय भारतीय काव्यशास्त्र का एक ऐसा सम्प्रदाय है जिस पर लम्बे समय तक विस्तृत चर्चा होती रही है। रस को काव्य की आत्मा माना जाता रहा है। साहित्य रचनात्मकता से जुड़ा होता है। जिसमें भावना का तत्व प्रबल होता है इसलिए रस की महता साहित्य-विवेचन में बढ़ जाती है। रस से हमारा क्या अभिप्राय है? रस के सन्दर्भ में भरतमुनि से पहले क्या स्थिति थी? रससूत्र को भरतमुनि ने किस प्रकार प्रतिपादित किया तथा रससूत्र की किस तरह से व्याख्याएँ हुई और हिंदी साहित्य में रस संबंधी विवेचन किस प्रकार हिंदी आलोचना में चर्चा का विषय बना– इन सभी मुद्दों पर इस इकाई में विस्तृत चर्चा हुई है। इस चर्चा के द्वारा यह समझाने का प्रयास किया गया है कि काव्य विवेचन तथा साहित्यिक चर्चा के दौरान रस का संदर्भ कितना महत्वपूर्ण है और प्रत्यक्ष या परोक्ष रूप में अभी भी प्रासंगिक है। इस विवेचन के माध्यम से रस के द्वारा भारतीय पद्धति से शास्त्र विवेचन और देशज

BHDC-106.indd 85 19-03-2021 08:51:35

चिन्तन की परम्परा के महत्व को भी स्थापित करने का उद्देश्य समझा जा सकता है। हिंदी साहित्य के विद्यार्थियों के लिए भारतीय काव्यशास्त्र और उसके अन्तर्गत रस सिद्धान्त को समझना आवश्यक है, इस विवेचन से स्पष्ट हो जाता है।

6.7 अवधारणात्मक शब्द

रस नित्पत्ति : भाव, विभाव, अनुभाव तथा व्यभिचारी भाव (संचारी भाव) के संयोग से रस की नित्पत्ति होती है। भरतमुनि ने नाट्यशास्त्र में 'रस नित्पत्ति' को इस रूप में परिभाषित किया है जिसकी अलग-अलग व्याख्याएँ परवर्ती आचार्यों ने की हैं।

उत्पत्तिवाद : उत्पत्तिवाद, भरतमुनि के रससूत्र की एक व्याख्या प्रस्तुत करने वाला सिद्धान्त है जिसका प्रतिपादन भट्ट लोल्लट ने किया है। इसका अर्थ है कि रस की उत्पत्ति होती है। ऐतिहासिक पात्र राम आदि में इसकी उत्पत्ति होती है। इसका अर्थ है कि अभिनेता, दर्शक में रस की उत्पत्ति नहीं होती, वे इसका आभास करते हैं।

अनुमितिवाद : अनुमितिवाद आचार्य शंकुक की रस संबंधी व्याख्या है। इस सिद्धान्त का प्रतिपादन शंकुक ने भरतमुनि के रस नित्पत्ति संबंधी मत को व्याख्यायित करते हुए कहा जिसका अर्थ है – रस की उत्पत्ति नहीं होती, न ही यह ऐतिहासिक पात्र रामादि में होता है। अभिनेता, अभिनेत्री अर्थात नट, नटी इसका अनुकरण करते हैं ठीक वैसे ही जैसे चित्र में घोड़े को देखकर वास्तविक घोड़े का आभास कर लेना। इस प्रकार रस की नित्पत्ति होती है।

भुक्तिवाद : रस की भुक्ति होती है। ऐसी अवधारणा प्रस्तुत करने वाले भट्टनायक ने रस नित्पत्ति की व्याख्या करते हुए रस की नित्पत्ति को दर्शक से भी जोड़कर देखा। उनके अनुसार रस की न तो उत्पत्ति होती है, न अनुमिति होती है अपितु उसकी भुक्ति होती है। यही भुक्तिवाद है।

अभिव्यक्तिवाद : अभिव्यक्तिवाद अभिनवगुप्त द्वारा प्रस्तावित रस नित्पत्ति की अवधारणा है। इसका अर्थ यह है कि रस की अभिव्यक्ति होती है। अभिनवगुप्त भी मत भी दर्शक के साधारणीकरण से हैं।

6.8 उपयोगी पुस्तकें

भरतमुनि, नाट्यशास्त्र (भाग-5), वाराणसी, चौखंभा संस्कृत संस्थान, संवंत 2071

Day, SK, *History of Sanskrit poetics*, New Delhi, New Bhartiya Book Publication, Edition 2014.

उपाध्याय, बलदेव, *संस्कृत आलोचना*, लखनऊ, उत्तर प्रदेश हिंदी संस्थान

सिंह, योगेन्द्र प्रताप, *भारतीय काव्यशास्त्र*, इलाहाबाद, लोक भारती प्रकाशन, संस्करण 2013.

शुक्ल, रामचन्द्र, *रस मीमांसा*, काशी, नागरी प्रचारिणी सभा, संस्करण 1948

नगेन्द्र, *रस सिद्धान्त*, दिल्ली : नेशनल पब्लिशिंक हाउस, संस्करण 1964

त्रिपाठी, राममूर्ति, *भारतीय काव्यशास्त्र के नए क्षितिज*, दिल्ली, राजकमल प्रकाशन, संस्करण 1985

BHDC-106.indd 86 19-03-2021 08:51:35

8) शुक्ल, रामचन्द्र, *चिन्तामणि*, *भाग-1*, इलाहाबाद, इन्डियन प्रेस, सन् 1977

9) वाजपेयी; नन्ददुलारे, *रस सिद्धान्त : नए संदर्भ* (प्रस्तोता राममूर्ति त्रिपाठी), नई दिल्ली, प्रकाशन संस्थान, संस्करण 1987

6.9 बोध प्रश्न

1) रस का अर्थ स्पष्ट करते हुए रसचिन्तन के प्रमुख आचार्यों की चर्चा कीजिए।

2) भरतमुनि के रसचिन्तन को समझाइए।

3) हिंदी साहित्यों में रसचिन्तन पर प्रकाश डालिए।

4) भुक्तिवाद की व्याख्या कीजिए।

5) उत्पत्तिवाद की व्याख्या कीजिए।

6.10 बोध प्रश्नों के उत्तर

1) देखिए भाग 6.2 तथा 6.3

2) देखिए उपभाग 6.3.3

3) देखिए भाग 6.5

4) देखिए उपभाग 6.4.3

5) देखिए उपभाग 6.4.3

ignou
THE PEOPLE'S
UNIVERSITY